P.G.S NATIONAL COLLEGE OF LAW, MATHURA

Paper -I **Paper Name- Jurisprudence & Legal Theory** **Unit -2**

Q- 1- विधि संप्रभु का समादेश है! इस कथन का आलोचनात्मक परीक्षण करते हुए बताइये की क्या यह सिद्धांत भारतीय न्याय व्यवस्था पर लागू होता है !

उत्तर- जॉन आस्टिन को विश्लेषणात्मक पद्धति का प्रवर्तक माना जाता है। आस्टिन को अंग्रेजी विधिशास्त्र का पिता समझा जाता है। आस्टिन के द्वारा लन्दन विश्वविद्यालय में दिये गये। उसके व्याख्यान **"दि प्राविन्स ऑफ ज्यूरिसप्रुडैन्स डिटरमिण्ड"** शीर्षक के अन्तर्गत प्रकाशित हुए। आस्टिन ने अपने व्याख्यानों में विधि की प्रकृति तथा उसकी उचित परिधि का विवेचन किया।

आस्टिन ने विधि के स्रोतों की विवेचना भी की तथा आंग्ल विधि प्रणाली का विश्लेषण प्रस्तुत किया। आस्टिन द्वारा अपनाई गई रीति विश्लेषणात्मक रीति कहलाती है। आस्टिन ने अपना अध्ययन क्षेत्र केवल सुस्पष्ट विधि तक ही सीमित रखा। अतः आस्टिन के द्वारा प्रवर्तित विचारधारा अनेक नामों से पुकारी जाती है, जैसे- विश्लेषणात्म (Analytical), विध्यात्मवाद (Positivism), विश्लेषणात्मक विध्यात्मवाद (Analytical Poaitivism)। प्रो. ऐलन आस्टिन की विचारधारा को आज्ञात्मक विचारधारा कहना उचित समझते हैं। यह नाम उन्होंने आस्टिन की विधि की संकल्पना के आधार पर दिया था।

आस्टिन की विधि की संकल्पना (Austin's Conception of Law) - आस्टिन ने विधि को निम्नलिखित प्रकार से परिभाषित किया है-

"किसी बुद्धिंयुक्त प्राणी द्वारा किसी बुद्धियुक्त प्राणी के, जो उसकी शक्ति के अधीन हाँ, मार्ग दर्शन के लिए अधिकथित नियम।"

विधि दो भागों में विभाजित की जा सकती है

(1) दैवीय विधियाँ - ईश्वर के द्वारा जो विधियाँ मनुष्य के लिए बनाई जाती हैं, उन्हें दैवीय विधियाँ कहते हैं।

(2) मानवीयं विधि- मानव द्वारा मानव के लिए बनाई गई विधियों को मानवीय विधियों कहते हैं। आस्टिन ने भानवीय विधियों को दो वर्गों में विभाजित किया है

(अ) सुस्पष्ट विधि- सुस्पष्ट विधियाँ वे विधियाँ होती हैं जो राजनीतिक रूप में श्रेष्ठ व्यक्ति द्वारा अपनी हैसियत में अथवा राजनीतिक रूप में श्रेष्ठ न होने वाले व्यक्तियों द्वारा, परन्तु राजनीतिक रूप में श्रेष्ठ द्वारा प्रदत्त अधिकारों के अनुसरण में बनाई जाती है। केवल वही विधियों विधिशास्त्र की विषय-सामग्री होती हैं।

(घ) अन्य विधियाँ - अन्य विधियाँ थे विधियाँ हैं जो राजनीतिक रूप में श्रेष्ठ व्यक्ति द्वारा था उनके द्वारा प्रदत्त अधिकारों के अनुसरण में नहीं बनाई जाती हैं।

PGS NATIONAL COLLEGE OF LAW

अनुचित रूप से विधि कही जाने वाली विधियों के सामान्य शीर्षक में सर्वप्रथम सादृश्य द्वारा. विधियाँ (Laws by Analogy) को रखा गया है, जिसमें फैशन, अन्तर्राष्ट्रीय विधि इत्यादि ड्यूटी है !

इसी प्रकार कतिपय अन्य नियम भी हैं जिन्हें रूपक विधियाँ (Laws by Metaphor) कहते जो प्रकृति की समानता प्रदर्शित करती हैं।

आस्टिन ने विधि को सम्प्रभु का आदेश कहा है। आस्टिन के मतानुसार, विधि उचित या अनुचित पर आधारित न होकर सम्प्रभु शक्ति के आदेशों पर आधारित है अतः आस्टिन का निश्चि मत है कि विधि का आधार प्रभुता सम्पन्न व्यक्ति या व्यक्तियों की शक्ति में निहित है। इसी को इन्होंने "विधि का आदेशात्मक सिद्धान्त" कहा है। आस्टिन के आदेशात्मक सिद्धान्त के अन्तर्गत निम्नलिखित तीन तत्व होते हैं

(1) आदेश, (2) सम्प्रभु (3) अनुशास्ति ।

(1) आदेश (Command) - आस्टिन के अनुसार, विधि सम्प्रभु का आदेश है। आस्टिन के अनुसार, आदेश राज्य की उस इच्छा की अभिव्यक्ति है जो प्रजा से किसी कार्य को 'करने' या 'न करने की आकांक्षा करे। इस इच्छा की अभिव्यक्ति प्रार्थना रूप में नहीं होती। सम्प्रभु का आदेश दो प्रकार का हो सकता है- सामान्य आदेश एवं विशिष्ट आदेश। सामान्य आदेश वह होता है जो सभी व्यक्तियों के प्रति सभी समय समान रूप से जारी किया जा सकता है तथा उस समय तक प्रभावशील रहता है जब तक कि उसका निरसन न किया जाए या उसे समाप्त न किया जाए। विशिष्ट आदेश कुछ विशिष्ट व्यक्तियों के लिए सभी समय के लिए या सभी व्यक्तियों के प्रति कुछ समय के लिए किया जाता है। आस्टिन ने सामान्य आदेश को ही सुस्पष्ट विधि कहा है। आस्टिन के अनुसार, सुस्पष्ट विधि की निम्नलिखित विशेषताएँ होती हैं

(i) सुस्पष्ट विधि एक प्रकार का आदेश होती है।

(ii) यह आदेश सामान्य होता है।

(iii) इस सामान्य आदेश को न मानने वाले को दण्ड दिया जाता है।

आदेश का अभिप्राय वैध आदेश से होता है, अतः डकैत द्वारा खजान्ची को खजाना सौंपने का आदेश वैध आदेश नहीं होता है।

(2) सम्प्रभु (Sovereign) - आस्टिन ने विधि को सम्प्रभु का आदेश कहा है। आस्टिन ने सम्प्रभु शक्ति के दो आवश्यक लक्षण बताए हैं। प्रथम यह है कि सर्वोच्च शक्ति होनी चाहिए जिस पर किसी अन्य शक्ति का प्रभुत्व न हो तथा द्वितीय यह है कि सम्प्रभु शक्ति इस प्रकार की होनी चाहिए कि प्रजा स्वेच्छा से उसकी आज्ञा पालन के लिए इच्छुक हो। आस्टिन ने सम्प्रभु को परिभाषा निम्न प्रकार से दो है-

PGS NATIONAL COLLEGE OF LAW

"यदि कोई सुनिश्चित वरिष्ठ व्यक्ति जो किसी अन्य समान वरिष्ठ व्यक्ति की आज्ञा का पालन करने का आदी न हो और किसी समाज विशेष के अधिकांश लोगों द्वारा उसकी आज्ञाओं का पालन किया जाता है, तो ऐसा सुनिश्चित वरिष्ठ व्यक्ति उस समाज का प्रभुताधारी होगा और वह समाज राजनीतिक एवं स्वतन्त्र समाज कहलायेगा।"

आस्टिन के द्वारा बताए गए दोनों ही लक्षणों को सम्प्रभु में होना चाहिए। इसमें से किसी एक के अभाव में यह सम्प्रभु नहीं हो सकता है।

(3) अनुशास्ति (Sanction) - आस्टिन ने अपने आदेशात्मक सिद्धान्त में यह स्पष्ट किया है कि सम्प्रभु के आदेश मात्र की विधि का रूप धारण नहीं करते जब तक कि उनके पीछे कोई अनुशास्ति न हो। इस प्रकार के आदेश जिनका पालन न करने पर या जिनका उल्लघंन होने पर दो व्यक्ति को दण्ड देने की व्यवस्था न हो, सही अर्थ में विधि नहीं कहे जा सकते हैं। आस्टिन के अनुसार, आदेश के साथ अनुशास्ति के जुड़ा रहने पर ही इन आदेशों को सुस्पष्ट विधि कहा जा सdsxkA

आस्टिन के विधि के सिद्धान्त की आलोचनाएँ- आस्टिन के विधि के सिद्धान्त की निम्नलिखित रूप में आलोचनाएँ हुई हैं (1) जैसा कि आस्टिन का मत है कि विधि सम्प्रभु का आदेश है, यह बात ऐतिहासिक तथ्यों के द्वारा समर्थित नहीं है। प्राचीन काल में श्रेष्ठ का आदेश नहीं वरन् रूढ़ियाँ मनुष्यों के आचरण को नियमित करती थीं। राज्य के अस्तित्व में आ जाने के पश्चात् भी रूढ़ियाँ आचरण को नियमित करती रही हैं। इसी आधार पर रूढ़ियों को भी विधिशास्त्र के अध्ययन में सम्मिलित किया जाना चाहिए, किन्तु आस्टिन ने रूढ़ियों की उपेक्षा की है।

(2) वह विधियाँ जो अनुज्ञात्मक स्वरूप की होती हैं तथा सिर्फ विशेषाधिकार प्रदत्त करती हैं, जैसे वसीयत अधिनियम जो वसीयती दस्तावेज के लेखन की रीति प्रदिपादित करता है जिससे कि इसका विधिक प्रभाव हो सके, आस्टिन की विधि की परिभाषा के अन्तर्गत नहीं आती है।

(3) संविधान के कन्वेन्शन जो अनिवार्य रूप से प्रवर्तित होते हैं यद्यपि वे न्यायालय द्वारा प्रवर्तनीय नहीं होते हैं, आस्टिन की परिभाषा के अनुसार विधि नहीं कहलायेंगे यद्यपि वे विधि हैं तथा विधिशास्त्र के अध्ययन की विषयवस्तु हैं।

(4) आस्टिन के सिद्धान्त में न्यायाधीशों के द्वारा निर्मित विधि के लिए कोई स्थान नहीं है। अपने कार्य को करने में न्यायाधीश विधि का निर्माण करते हैं।

(5) आस्टिन ने अन्तर्राष्ट्रीय विधि को सुस्पष्ट नैतिकता के अन्तर्गत रखा है। विधि का मुख्य तत्व अनुशास्ति है जिसका अन्तर्राष्ट्रीय विधि में अभाव है, किन्तु अब केवल यही इसे विधि क जाने से वंचित नहीं करेगा। आज के आधुनिक युग में

PGS NATIONAL COLLEGE OF LAW

अन्तर्राष्ट्रीय विधि को भी विधि माना जाता है। अत: आस्टिन की परिभाषा के अनुसार विधि की एक महत्वपूर्ण शाखा विधिशास्त्र के अध्ययन से अपवर्जित हो जायगी।

(6) ऑस्टिन के मतानुसार, यह मात्र अनुशास्ति ही है जो मनुष्य को विधि के पालन के लिए प्रेरित करती है। लार्ड ब्राइस ने इस बात की आलोचना की है। ब्राइस ने अपनी पुस्तक **"स्टडीज इन हिस्ट्री एण्ड ज्यूरिसप्रुडैन्स"** में निश्चेष्टता, सहानुभूति, समादर, भय एवं तर्क को संक्षेप में उन के रूप में वर्णित किया है जो किसी मनुष्य को विधि का पालन करने के लिए प्रेरित हेतुओं करते हैं। राज्य की शक्ति वह अन्तिम वस्तु, वह बल है जो विधि का पालन कराने का अन्तिम साधन है।

(7) यह मत कि विधि 'सम्प्रभु का आदेश' है यह दर्शित करता है कि जैसे सम्प्रभु समाज ऊपर उससे पृथक् रूप में स्थित है और अपने मनमाने आदेश देता है। यह मत विधि को कृत्रिम के बनाता है और विधि के स्वभावतः विकासशील स्वरूप को ध्यान में नहीं रखता है। सम्प्रभु समाज या राज्य का एक अभिन्न अंग है और उसके आदेश संगठित समाज के आदेश हैं। आधुनिक समय में राज्य स्वयं सम्प्रभु है और विधि जनता की सामान्य इच्छा के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। अतः विधि को समादेश नहीं कहा जा सकता है।

(8) **आस्टिन** के अनुसार विधि का नैतिकता से कई सम्बन्ध नहीं है, किन्तु वह प्रस्थापना नहीं है। विधि स्वेच्छापूर्ण समादेश नहीं है जैसा कि आस्टिन द्वारा कहा गया है रह एक कायिक (organic) प्रकृति का विकास है। इसके अतिरिक्त विधि का विकास सोच-समझ कर किया गया है और यह एक निश्चित लक्ष्य की ओर निर्दिष्ट को गयी है। इस प्रकार यह सदाचार सम्बन्धी और नैतिक तत्वों से पूरी तरह रहित नहीं है। आस्टिन ने विधि के इस पहलू पर ध्यान नहीं दिया है।

(9) **ड्यूगिट** ने विधि को सामाजिक तथ्य के रूप में परिभाषित करते हुए आस्टिन के सुस्पष्ट विधि सिद्धान्त को अमान्य कर दिया है। ड्यूगिट के मतानुसार, सुस्पष्ट विधि जैसी कोई वस्तु ही नहीं है। ड्यूगिट ने समाज की आवश्यकताओं को ही विधि का मूल आधार माना है। उनके अनुसार, विधि को राज्य की सम्प्रभु शक्ति पर आधारित करना उचित नहीं है, परन्तु डा. ऐलन के मतानुसार, "ड्यूगिट ने राज्य की सम्प्रभु शक्ति की अवहेलना करके विधि के प्रति अत्यन्त संकुचित दृष्टिकोण अपनाया है।"

प्रश्न- 2- केलसन के विशुद्ध विधि के सिद्धांत की व्याख्या कीजिये ! क्या यह कथन सत्य है कि इस सिद्धांत ने विधि की सूखी हड्डियों को छोड़ा है जिनमे मास और रक्त नहीं है जो इसको जीवन देते है ! टिप्पणी कीजिए !

उत्तर – केल्सन तथा उसके अनुयायियों को सामूहिक रूप में विधिशास्त्र की वियना शाखा के नाम से सम्बोधित किया जाता है। केल्सन का विधि सिद्धान्त विधिशास्त्र में दो प्रकार से महत्त्वपूर्ण माना गया है। पहला यह कि इसे विश्लेषणात्मक पद्धति के विकास का सर्वोच्च बिन्दु माना गया है। एवं दूसरा यह कि इस सिद्धान्त में उन्नीसवीं शताब्दी के अन्तिम तथा बीसवीं

PGS NATIONAL COLLEGE OF LAW

शताब्दी के आरम्भिक वर्षों में विधि के प्रति अपनायी जाने वाली नीति का स्पष्ट दिग्दर्शन होता है। आस्टिन एवं केल्सन के विधि सम्बन्धी विचारों में निकट साम्य है। केल्सन ने अपनी विचार पद्धति को काण्ट के विधि दर्शन पर आधारित किया जबकि आस्टिन की विश्लेषणात्मक पद्धति उपयोगितावाद पर आधारित थी, किन्तु केल्सन निम्न स्थानों पर काण्ट से भिन्न हो जाता है

(1) **काण्ट** का कहना है कि सुस्पष्ट विधि अपने आप में पूर्ण नहीं है। केल्सन भी इस बात को स्वीकार करता है, परन्तु इसके आगे केल्सन काण्ट के इस दृष्टिकोण से आगे निकल जाता है, जबकि वह विज्ञान की शक्ति को स्वीकार करने लगता है। केल्सन के अनुसार, विश्व की संभी वस्तुएँ विज्ञान की सीमा के अन्तर्गत ही हैं। सारा ज्ञान विज्ञान द्वारा ग्राह्य है। जबकि काण्ट के अनुसार अधिकांश निरपेक्ष सत्य मानवीय ज्ञान के परे है। इस प्रकार के केएसन ने ज्ञान एवं नैतिकता में अन्तर बताया जबकि काण्ट ऐसा नहीं मानते थे।

(2) **काण्ट** ने अनुभव, निर्णय, अस्तित्व और नीति के मध्य अन्तर स्थापित किया था। काण्ट के मतानुसार निर्णय अनुभव पर पूरी तरह से आधारित है। उसका कहना है कि "Concept _Without precept is empty." काण्ट से केल्सन इस स्थान पर अपने विचारों में भिन्नता रखता है । इस स्थान पर उसका गुरू काण्ट नहीं वरन् ह्यूम हो जाता है। ह्यूम का कहना है कि नैतिक आदेशों को बाह्य भौतिक जगत से नहीं प्राप्त किया जा सकता है। 'चाहिए' का 'है' से नहीं प्राप्त किया जा सकता है। उदाहरण के लिए, 'क' ने 'ख' की हत्या कर दी। 'ख' के मृत शरीर का कौन-सा हिस्सा यह बोलता है कि 'ख' की हत्या की जानी चाहिए थी या नहीं की जानी चाहिए थी । इसी प्रकार उसके शरीर का कौन सा हिस्सा यह कहता है कि 'क' को दण्ड दिया जाना -हिए या नहीं। परीक्षण के बाद यह ज्ञात होता है कि 'ख' के शरीर का कोई भी हिस्सा इस प्रकार का नैतिक मुख नहीं रखता है। अतः यह स्पष्ट है कि नैतिक आदेशों के नियम वास्तव में मनुष्यों के आत्म-निर्णय पर निर्भर करते हैं। केल्सन की भी यही स्थिति है। चाहिए को केवल चाहिए से ही प्राप्त किया जा सकता है 'है' से नहीं।

केल्सन के सिद्धान्त के आधारभूत तत्व (Essential Elements of Kelsen's Theory) - केल्सन का शुद्ध विधि सिद्धान्त निम्नलिखित पाँच आधारभूत तत्वों पर आधारित है

(1) विधि के सिद्धान्त के अन्तर्गत वास्तविक विधि अर्थात् 'विधि जैसी कि वह है' का वर्णन ना चाहिए न कि 'जैसी कि वह होनी चाहिए' का । इस दृष्टिकोण से केल्सन के विचार _स्टिन से मिलते हैं, इसलिए उनकी गणना प्रमाणवादियों की श्रेणी में की गई है न कि प्रकृति वादियों की श्रेणी में । •

(2) केल्सन के अनुसार, विधि के सिद्धान्त और विधि में अन्तर है। जिस तरह से विश्व की प्राकृतिक वस्तुओं में कोई भी तार्किकता नहीं है किन्तु ऐसा वैज्ञानिक सिद्धान्त जो इन वस्तुओं का वर्णन करता है उसे तार्किक होना अनिवार्य है। ठीक उसी

PGS NATIONAL COLLEGE OF LAW

तरह से यद्यपि विधि के अन्तर्गत विभिन्न पारस्परिक विरोधी नियमों का वर्णन रहता है फिर भी विधि के सिद्धान्त का यह कार्य होता है कि वह उन सभी विरोधी नियमों को एक-दूसरे से तार्किक दृष्टि से सम्बद्ध करे और उनका नियमित रूप से एकीकरण करे। केल्सन ने अपना विधि सिद्धान्त केवल क्षणिक स्फूर्ति के प्रभाव आकर प्रतिपादित नहीं किया बल्कि उन्होंने विधि के तथ्यों के वास्तविक रूप से सूक्ष्म अध्ययन पश्चात् अपना सिद्धान्त प्रतिपादित किया। केल्सन ने कहा है कि वे अपने शुद्ध विधि सिद्धान्त निरूपण इस प्रकार कर रहे हैं कि जिसके माध्यम से विधि की समस्त विषय-वस्तु को प्रस्तुत किया जा सके।

(3) विधि के सिद्धान्त के अपरिवर्तनशील और सर्वमान्य होना चाहिए। उसे समय एवं स्थान परिसीमाओं से मुक्त होना चाहिए। विधि का सिद्धान्त ऐसा होना चाहिए कि सभी समयों में स्थानों पर समान रूप से प्रयोग किया जा सके। इस दृष्टि से केल्सन को सामान्य विधिशास्त्र पोषक माना जा सकता है।

(4) विधि का सिद्धान्त विशुद्ध होना चाहिए अर्थात् उसे राजनीति, नीतिशास्त्र, इतिहास, समाजशास्त्र आदि से अप्रभावित होना चाहिए। केल्सन के मतानुसार, किसी भी सिद्धान्त को शुद्धता के लिए यह आवश्यक है कि वह उपरोक्त प्रभावों से मुक्त रखा जाए, परन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि केल्सन ने राजनीतिशास्त्र, नीतिशास्त्र इत्यादि को व्यर्थ तथा महत्वहीन समझा हो। उनका तो केवल यह कहना था कि विधि के सिद्धान्त को इन प्रभावों से अलग रखा जाना चाहिए!

(5) केल्सन ने विधिशास्त्र को एक सिद्धान्त मूलक विज्ञान माना है न कि नैसर्गिक विज्ञानं नैसगिंक विज्ञानों से सम्बन्धित विधियाँ कारण और परिणामों के तालमेल का विवेचन या कथन मात्र होती हैं।

केल्सन का विधि का सिद्धान (Kelsen's Pure Theory of Law) - केल्सन का शुद्ध सिद्धान्त मानकों (norms) की एक क्रमबद्ध श्रृंखला है। उनके सिद्धान्त को अच्छी तरह से समझने के लिए सबसे पहले विज्ञान एवं विधि के आधार वाक्य में अन्तर समझ लेना अत्यन्त आवश्यक है। विज्ञान का आधार वाक्य प्राकृतिक विज्ञान का विषय है, जबकि विधि का आधार वाक्य विधिशास्त्र का विषय है। विज्ञान का आधार वाक्य हमको कार्य और कारण के सम्बन्ध का ज्ञान कराता है। यह उन बातों से सम्बन्धित है जो कार्य एवं कारण के रूप में अवश्य ही घटित हुआ करते हैं। उदाहरणार्थ, न्यूटन ने गुरुत्वाकर्षण का सिद्धान्त दिया जो यह बताता है कि किसी भी ऊपर फैंकी गई वस्तु का नीचे गिरना अवश्यम्भावी है अर्थात् विज्ञान का आधार वाक्य कि कार्य का अनिवार्य रूप से घटित होना सूचित करता है। केल्सन ने इसे 'जो है" (Stern) कहा है दूसरी ओर विधि के आधार वाक्य का सम्बन्ध इस बात के वर्णन से है कि किसी परिस्थिति क्या होना चाहिए अर्थात् किससे क्या घटित होना चाहिए ? केल्सन ने इसे 'चाहिए' (Soller) कहा है। उदाहरणार्थ, यदि कोई व्यक्ति चोरी करता है तो उसे दण्ड मिलना चाहिए।

PGS NATIONAL COLLEGE OF LAW

P.G.S NATIONAL COLLEGE OF LAW, MATHURA

Paper-I **Paper Name- Jurisprudence & Legal Theory** **Unit -2**

केल्सन के सिद्धान्त का निचोड़ यह है कि प्राकृतिक विज्ञान 'कारणता' से सम्ब जबकि विधि मानकत्व से सम्बन्धित है। पहला 'है' से सम्बन्धित है जबकि दूसरा चा सम्बन्धित है। केल्सन ने आगे स्पष्ट किया है कि विधि के इस चाहिए एवं नैतिकता के चाहिए अन्तर है। विधि के अन्तर्गत चाहिए के पीछे राज्य की शक्ति कार्य करती है।

केल्सन के उपरोक्त कथन का अर्थ यह नहीं है कि वे 'नैतिक चाहिए' के अस्तित्व स्वीकार नहीं करते हैं। उनका केवल यह कहना है कि विधिक चाहिए को नैतिक चाहिए से अलग रखना ही ठीक होगा। यह भी सम्भव है कि कुछ ऐसे विधिक चाहिए हों जिनका उद्‌गम नैतिक चाहिए से ही हो। इसका अभिप्राय हुआ कि केल्सन के अनुसार विधि को न्याय के संदर्भ में परिभाषित नहीं किया जा सकता क्योंकि कुछ विधियाँ अन्यायपूर्ण होते हुए भी विधि की श्रेणी में रखी जा सकती हैं।

केल्सन ने विधिक चाहिए एवं नैतिक चाहिए में अन्तर स्थापित किया है। विधिक चाहिए बाह्य जगत से प्राप्त किया जाता है। यह स्वभावतः वस्तुगत है एवं वस्तुगत तथ्यों पर आधारित होता है। इसके विपरीत नैतिक चाहिए स्वभाव में आत्मगत होता है। वास्तव में यह वस्तुगत से ही नहीं अपितु वैयक्तिक भावना एवं विचार से भी प्राप्त किया जा सकता है। विधिक चाहिए का मुख्य तत्व उसमें निहित अनुशास्ति है। अनुशास्ति का अर्थ ऐसे दण्डादेश से है जो किसी कार्य को करने या न करने की दशा में प्रदान किया जाता है। इस प्रकार किसी अनुशासित किसी प्राधिकारी द्‌वारा आरोपित होना चाहिए।

केल्सन के शुद्‌ध विधि के सिद्‌धान्त के महत्व का वर्णन निम्न प्रकार से किया सकता है ---

(1) केल्सन के शुद्‌ध विधि सिद्‌धान्त का महत्व इसलिए है कि केल्सन ने यह आवश्यक नहीं समझा कि विधि का स्वरूप आदेशात्मक ही हो। इसका अर्थ यह कतई नहीं है कि केल्सन अनुशासित की आवश्यकता को अस्वीकार किया है केल्सन के सिद्‌धांत में भी अनुशासित उतनी ही आवश्यक थी जितनी कि आस्टिन के सिद्‌धान्त में, किन्तु केल्सन के लिए विधि व्यक्तिगत सम्प्रभुताधारी का आदेश न होकर एक काल्पनिक निर्णय मात्र थी।

(2) केल्सन के सिद्‌धान्तानुसार राज्य एवं विधि के मध्य कोई द्‌वैधता नहीं है। विधि की विश्लेषणात्मक पद्‌धति के प्रवर्तकों के अनुसार विधि को राज्य का आदेश माना गया है। विधि की मई समाजशास्त्री पद्‌धति के प्रवर्त्तकों ने राज्य एवं विधि के मध्य द्‌वैध को माना है, परन्तु केल्सन ने राज्य एवं विधि का एक वस्तु के दो भिन्न पहलू माना है। केल्सन ने आस्टिन की इस धारणा का खण्डन किया है कि राज्य विधि को उत्पन्न करता है। उनके अनुसार, विधि स्वयं अपनी सृष्टि को नियमित करती है।

(3) केल्सन के शुद्‌ध विधि सिद्‌धान्त के अन्तर्गत रूढ़िगत विधि को वास्तविक विधि के रूप में मान्यता दी गई है।

PGS NATIONAL COLLEGE OF LAW

(4) अन्तर्राष्ट्रीय विधि के क्षेत्र में केल्सन के शुद्ध विधि सिद्धान्त का विशेष महत्त्व है। केल्सन ने अन्तर्राष्ट्रीय विधि को राज्य की विधि से श्रेष्ठतम माना है। आस्टिन ने अन्तर्राष्ट्रीय विधि को वास्तविक विधि के रूप में नहीं माना क्योंकि इसके पीछे कोई शक्ति नहीं होती है जो इसे प्रभावशाली बनाये, परन्तु केल्सन के मतानुसार अन्तर्राष्ट्रीय विधि के मानक राज्य पर बन्धनकारी स्भाव रखते हैं।

(5) केल्सन के विधि सिद्धान्तों का महत्व इसलिए भी है क्योंकि इससे व्यक्तिगत के सिद्धान्त से सम्बन्धित समस्याओं के हल करने में सहायता मिली है। विधिशास्त्र में नियमित व्यक्तित्व सदैव ही विवादग्रस्त विषय रहा है। केल्सन के मतानुसार, व्यक्तित्व विधिक मानकों की संक्रिया को काई हैं तथा अधिकार और कर्त्तव्य उसके रूप हैं।

प्रशन- विश्लेष्णात्मक शाखा की मुख्य विशेषताओ का वर्णन कीजिए तथा इस शाखा की विचारधारा की कमियों को इगित कीजिए !

उत्तर - उत्तर – भिन्न-भिन्न विधिशास्त्रियों ने भिन्न-भिन्न रूप से कानून के उद्भव, कार्य एवं लक्ष्य के विषय में विचार प्रस्तुत किये हैं, किन्तु इनके विचार की विषय-सामग्री में कोई भी भिन्नता नहीं है। विचारों की भिन्नता वास्तव में उनके भिन्न दृष्टिकोण, अध्ययन की पद्धति और किसी विशेष वस्तु पर अपेक्षाकृत अधिक जोर डालने के कारण हैं। विधिशास्त्र के सम्बन्ध में जो ये भित्र-भिन्न विचार प्रस्तुत किये गये हैं उनको मुख्य चार शाखाओं के अधीन रखा जा सकता है

(1) विश्लेषणात्मक शाखा, (3) दार्शनिक शाखा, (2) ऐतिहासिक शाखा (4) सामाजिक शाखा।

विश्लेषणात्मक शाखा (Analytical School)– विश्लेषणात्मक विधिशास्त्र विधि के उस रूप का वर्णन करता है जो कि वास्तव में विद्यमान है। इसका कार्य विधि के मूलभूत सिद्धान्तों का विश्लेषण करना है। इसका कार्य विधि की उत्पत्ति या इतिहास या नैतिक महत्ता या वैधानिकता का वर्णन किये बिना ही विधि के मूलभूत सिद्धान्तों का विश्लेषण करना है। इसका उद्देश्य संसार की परिपक्व वैधानिक व्यवस्था के सिद्धान्तों एवं वैधानिक धारणाओं को स्पष्ट एवं सरल रूप में प्रस्तुत करना है। सामण्ड के अनुसार, यह पद्धति नागरिक विधि के मूलभूत सिद्धान्तों का विवेचन करती है। आस्टिन ने विश्लेषणात्मक विधिशास्त्र के महत्त्व को स्वीकार करते हुए लिखा है कि यह मस्तिष्क के भ्रम को दूर करता है।

जॉन आस्टिन को विश्लेषणात्मक पद्धति का प्रवर्तक माना जाता है। आस्टिन को अंग्रेजी विधिशास्त्र का पिता समझा जाता है। आस्टिन के द्वारा लन्दन विश्वविद्यालय में दिये गये। उसके व्याख्यान "दि प्राविन्स ऑफ ज्यूरिसप्रुडैन्स डिटरमिण्ड" शीर्षक के अन्तर्गत प्रकाशित हुए। आस्टिन ने अपने व्याख्यानों में विधि की प्रकृति तथा उसकी उचित परिधि का विवेचन किया।

आस्टिन ने विधि के स्रोतों की विवेचना भी की तथा आंग्ल विधि प्रणाली का विश्लेषण प्रस्तुत किया। आस्टिन द्वारा अपनाई गई रीति विश्लेषणात्मक रीति कहलाती है। आस्टिन ने अपना अध्ययन क्षेत्र केवल सुस्पष्ट विधि तक ही

PGS NATIONAL COLLEGE OF LAW

सीमित रखा। अतः आस्टिन के द्वारा प्रवर्तित विचारधारा अनेक नामों से पुकारी जाती है, जैसे- विश्लेषणात्म (Analytical), विध्यात्मवाद (Positivism), विश्लेषणात्मक विध्यात्मवाद (Analytical Poaitivism)। प्रो. ऐलन आस्टिन की विचारधारा को आज्ञात्मक विचारधारा कहना उचित समझते हैं। यह नाम उन्होंने आस्टिन की विधि की संकल्पना के आधार पर दिया था।

आस्टिन की विधि की संकल्पना (Austin's Conception of Law) - आस्टिन ने विधि को निम्नलिखित प्रकार से परिभाषित किया है-

"किसी बुद्धिंयुक्त प्राणी द्वारा किसी बुद्धियुक्त प्राणी के, जो उसकी शक्ति के अधीन हाँ, मार्ग दर्शन के लिए अधिकथित नियम।" विधि दो भागों में विभाजित की जा सकती है

(1) दैवीय विधियाँ - ईश्वर के द्वारा जो विधियाँ मनुष्य के लिए बनाई जाती हैं, उन्हें दैवीय विधियाँ कहते हैं।

(2) मानवीयं विधि-मानव द्वारा मानव के लिए बनाई गई विधियों को मानवीय विधियों कहते हैं। आस्टिन ने भानवीय विधियों को दो वर्गों में विभाजित किया है

(अ) सुस्पष्ट विधि- सुस्पष्ट विधियाँ वे विधियाँ होती हैं जो राजनीतिक रूप में श्रेष्ठ व्यक्ति द्वारा अपनी हैसियत में अथवा राजनीतिक रूप में श्रेष्ठ न होने वाले व्यक्तियों द्वारा, परन्तु राजनीतिक रूप में श्रेष्ठ द्वारा प्रदत अधिकारों के अनुसरण में बनाई जाती है। केवल वही विधियों विधिशास्त्र की विषय-सामग्री होती हैं।

(घ) अन्य विधियाँ - अन्य विधियाँ थे विधियाँ हैं जो राजनीतिक रूप में श्रेष्ठ व्यक्ति द्वारा था उनके द्वारा प्रदत अधिकारों के अनुसरण में नहीं बनाई जाती हैं।

अनुचित रूप से विधि कही जाने वाली विधियों के सामान्य शीर्षक में सर्वप्रथम सादृश्य द्वारा. विधियाँ (Laws by Analogy) को रखा गया है, जिसमें फैशन, अन्तर्राष्ट्रीय विधि इत्यादि ड्यूटी है !

इसी प्रकार कतिपय अन्य नियम भी हैं जिन्हें रूपक विधियाँ (Laws by Metaphor) कहते जो प्रकृति की समानता प्रदर्शित करती हैं।

आस्टिन ने विधि को सम्प्रभु का आदेश कहा है। आस्टिन के मतानुसार, विधि उचित या अनुचित पर आधारित न होकर सम्प्रभु शक्ति के आदेशों पर आधारित है अतः आस्टिन का निश्चि मत है कि विधि का आधार प्रभुता सम्पन्न व्यक्ति या व्यक्तियों की शक्ति में निहित है। इसी को इन्होंने "विधि का आदेशात्मक सिद्धान्त" कहा है। आस्टिन के आदेशात्मक सिद्धान्त के अन्तर्गत निम्नलिखित तीन तत्व होते हैं

(1) आदेश, (2) सम्प्रभु (3) अनुशास्ति ।

PGS NATIONAL COLLEGE OF LAW

(1) आदेश (Command) - आस्टिन के अनुसार, विधि सम्प्रभु का आदेश है। आस्टिन के अनुसार, आदेश राज्य की उस इच्छा की अभिव्यक्ति है जो प्रजा से किसी कार्य को 'करने' या 'न करने की आकांक्षा करे। इस इच्छा की अभिव्यक्ति प्रार्थना रूप में नहीं होती। सम्प्रभु का आदेश दो प्रकार का हो सकता है- सामान्य आदेश एवं विशिष्ट आदेश। सामान्य आदेश वह होता है जो सभी व्यक्तियों के प्रति सभी समय समान रूप से जारी किया जा सकता है तथा उस समय तक प्रभावशील रहता है जब तक कि उसका निरसन न किया जाए या उसे समाप्त न किया जाए। विशिष्ट आदेश कुछ विशिष्ट व्यक्तियों के लिए सभी समय के लिए या सभी व्यक्तियों के प्रति कुछ समय के लिए किया जाता है। आस्टिन ने सामान्य आदेश को ही सुस्पष्ट विधि कहा है। आस्टिन के अनुसार, सुस्पष्ट विधि की निम्नलिखित विशेषताएँ होती हैं

(i) सुस्पष्ट विधि एक प्रकार का आदेश होती है।

(ii) यह आदेश सामान्य होता है।

(iii) इस सामान्य आदेश को न मानने वाले को दण्ड दिया जाता है।

आदेश का अभिप्राय वैध आदेश से होता है, अतः डकैत द्वारा खजान्ची को खजाना सौंपने का आदेश वैध आदेश नहीं होता है।

(2) सम्प्रभु (Sovereign) - आस्टिन ने विधि को सम्प्रभु का आदेश कहा है। आस्टिन ने सम्प्रभु शक्ति के दो आवश्यक लक्षण बताए हैं। प्रथम यह है कि सर्वोच्च शक्ति होनी चाहिए जिस पर किसी अन्य शक्ति का प्रभुत्व न हो तथा द्वितीय यह है कि सम्प्रभु शक्ति इस प्रकार की होनी चाहिए कि प्रजा स्वेच्छा से उसकी आज्ञा पालन के लिए इच्छुक हो। आस्टिन ने सम्प्रभु की परिभाषा निम्न प्रकार से दो है-

"यदि कोई सुनिश्चित वरिष्ठ व्यक्ति जो किसी अन्य समान वरिष्ठ व्यक्ति की आज्ञा का पालन करने का आदी न हो और किसी समाज विशेष के अधिकांश लोगों द्वारा उसकी आज्ञाओं का पालन किया जाता है, तो ऐसा सुनिश्चित वरिष्ठ व्यक्ति उस समाज का प्रभुताधारी होगा और वह समाज राजनीतिक एवं स्वतन्त्र समाज कहलायेगा।"

आस्टिन के द्वारा बताए गए दोनों ही लक्षणों को सम्प्रभु में होना चाहिए। इसमें से किसी एक के अभाव में यह सम्प्रभु नहीं हो सकता है।

(3) अनुशास्ति (Sanction) - आस्टिन ने अपने आदेशात्मक सिद्धान्त में यह स्पष्ट किया है कि सम्प्रभु के आदेश मात्र की विधि का रूप धारण नहीं करते जब तक कि उनके पीछे कोई अनुशास्ति न हो। इस प्रकार के आदेश जिनका पालन न करने पर या जिनका उल्लघंन होने पर दो व्यक्ति को दण्ड देने की व्यवस्था न हो, सही अर्थ में विधि नहीं कहे जा

PGS NATIONAL COLLEGE OF LAW

सकते हैं। आस्टिन के अनुसार, आदेश के साथ अनुशास्ति के जुड़ा रहने पर ही इन आदेशों को सुस्पष्ट विधि कहा जा सकता आस्टिन के विधि के सिद्धान्त की आलोचनाएँ- आस्टिन के विधि के सिद्धान्त की निम्नलिखित रूप में आलोचनाएँ हुई हैं

(1) जैसा कि आस्टिन का मत है कि विधि सम्प्रभु का आदेश है, यह बात ऐतिहासिक तथ्यों के द्वारा समर्थित नहीं है। प्राचीन काल में श्रेष्ठ का आदेश नहीं वरन् रूढ़ियाँ मनुष्यों के आचरण को नियमित करती थीं। राज्य के अस्तित्व में आ जाने के पश्चात् भी रूढ़ियाँ आचरण को नियमित करती रही हैं। इसी आधार पर रूढ़ियों को भी विधिशास्त्र के अध्ययन में सम्मिलित किया जाना चाहिए, किन्तु आस्टिन ने रूढ़ियों की उपेक्षा की है।

(2) वह विधियाँ जो अनुज्ञात्मक स्वरूप की होती हैं तथा सिर्फ विशेषाधिकार प्रदत्त करती हैं, जैसे वसीयत अधिनियम जो वसीयती दस्तावेज के लेखन की रीति प्रदिपादित करता है जिससे कि इसका विधिक प्रभाव हो सके, आस्टिन की विधि की परिभाषा के अन्तर्गत नहीं आती है।

(3) संविधान के कन्वेन्शन जो अनिवार्य रूप से प्रवर्तित होते हैं यद्यपि वे न्यायालय द्वारा प्रवर्तनीय नहीं होते हैं, आस्टिन की परिभाषा के अनुसार विधि नहीं कहलायेंगे यद्यपि वे विधि हैं तथा विधिशास्त्र के अध्ययन की विषयवस्तु हैं।

(4) आस्टिन के सिद्धान्त में न्यायाधीशों के द्वारा निर्मित विधि के लिए कोई स्थान नहीं है। अपने कार्य को करने में *न्यायाधीश विधि का निर्माण करते हैं।*

(5) आस्टिन ने अन्तर्राष्ट्रीय विधि को सुस्पष्ट नैतिकता के अन्तर्गत रखा है। विधि का मुख्य तत्व अनुशास्ति है जिसका अन्तर्राष्ट्रीय विधि में अभाव है, किन्तु अब केवल यही इसे विधि क जाने से वंचित नहीं करेगा। आज के आधुनिक युग में अन्तर्राष्ट्रीय विधि को भी विधि माना जाता है। अत: आस्टिन की परिभाषा के अनुसार विधि की एक महत्त्वपूर्ण शाखा विधिशास्त्र के अध्ययन से अपवर्जित हो जायगी।

(6) ऑस्टिन के मतानुसार, यह मात्र अनुशास्ति ही है जो मनुष्य को विधि के पालन के लिए प्रेरित करती है। लार्ड ब्राइस ने इस बात की आलोचना की है। ब्राइस ने अपनी पुस्तक **"स्टडीज इन हिस्ट्री एण्ड ज्यूरिसप्रुडैन्स"** में निश्चेष्टता, सहानुभूति, समादर, भय एवं तर्क को संक्षेप में उन के रूप में वर्णित किया है जो किसी मनुष्य को विधि का पालन करने के लिए प्रेरित हेतुओं करते हैं। राज्य की शक्ति वह अन्तिम वस्तु, वह बल है जो विधि का पालन कराने का अन्तिम साधन है।

(7) यह मत कि विधि 'सम्प्रभु का आदेश' है यह दर्शित करता है कि जैसे सम्प्रभु समाज ऊपर उससे पृथक् रूप में स्थित है और अपने मनमाने आदेश देता है। यह मत विधि को कृत्रिम के बनाता है और विधि के स्वभावतः विकासशील

PGS NATIONAL COLLEGE OF LAW

स्वरूप को ध्यान में नहीं रखता है। सम्प्रभु समाज या राज्य का एक अभिन्न अंग है और उसके आदेश संगठित समाज के आदेश हैं। आधुनिक समय में राज्य स्वयं सम्प्रभु है और विधि जनता की सामान्य इच्छा के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। अतः विधि को समादेश नहीं कहा जा सकता है।

(8) आस्टिन के अनुसार विधि का नैतिकता से कई सम्बन्ध नहीं है, किन्तु वह प्रस्थापना नहीं है। विधि स्वेच्छापूर्ण समादेश नहीं है जैसा कि आस्टिन द्वारा कहा गया है रह एक कायिक (organic) प्रकृति को विकास है। इसके अतिरिक्त विधि का विकास सोच-समझ कर किया गया है और यह एक निश्चित लक्ष्य की ओर निर्दिष्ट को गयी है। इस प्रकार यह सदाचार सम्बन्धी और नैतिक तत्वों से पूरी तरह रहित नहीं है। आस्टिन ने विधि के इस पहलू पर ध्यान नहीं दिया है।

(9) **इ्यूगिट** ने विधि को सामाजिक तथ्य के रूप में परिभाषित करते हुए आस्टिन के सुस्पष्ट विधि सिद्धान्त को अमान्य कर दिया है। इ्यूगिट के मतानुसार, सुस्पष्ट विधि जैसी कोई वस्तु ही नहीं है। इ्यूगिट ने समाज की आवश्यकताओं को ही विधि का मूल आधार माना है। उनके अनुसार, विधि को राज्य की सम्प्रभु शक्ति पर आधारित करना उचित नहीं है, परन्तु डा. ऐलन के मतानुसार, "इ्यूगिट ने राज्य की सम्प्रभु शक्ति की अवहेलना करके विधि के प्रति अत्यन्त संकुचित दृष्टिकोण अपनाया है।"

PGS NATIONAL COLLEGE OF LAW